†प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं भरसक कोशिश करूंगा कि इस वाद-विवाद में रोष व उत्तेजना पैदा न होने पावे ; मैं कुछ बुनियादी बातों की चर्चा करूंगा सभा में दोनों पक्षों की ओर से कुछ ऐसी बातें कही गयी हैं, जिनका वाद-विवाद से कोई मतलब नहीं है। पर ऐसे वाद-विवाद में कोई ऐसी निर्धारित रेखा नहीं खींची जा सकती।

श्री डांगे ने, जिन्होंने अपना धाराप्रवाह व विद्वता पूर्ण भाषण दिया, अनेक बातें कहीं। मुझे आश्चर्य हुआ कि इतने लम्बे भाषण में सार की बात कितनी कम थी। उन्होंने जो कुछ कहा उसे समझने की मैंने कोशिश की। उन्होंने, लोकतंत्र तथा अन्य अनेक मामलों व षड्यंत्र आदि के बारे में अनेक बातें कहीं पर चर्चा के विषय के संबंध में बहुत ही थोड़ा कहा। उनके भाषण का और कुछ हद तक श्री गोपालन के भी भाषण का मुख्य तर्क यह है कि केरल सरकार को समाप्त करने के लिये एक षड्यंत्र किया गया था।

सभा के दोनों पक्षों की ओर से और खास तौर से विरोधी पक्ष की ओर से लोकतंत्र शब्द का बहुत अधिक जिक्र किया गया। श्री डांगे ने मुझ पर लोकतंत्र की हत्या का आरोप लगाया—मुझे उनके शब्द ठीक से याद नहीं हैं पर उन्होंने कुछ ऐसे ही शब्द कहे थे। इस संबंध में मुझे एक उस नव-युवक की कहानी याद आती है जिसने अपने मां बाप की हत्या कर दी थी। जब वह न्यायालय के सामने उपस्थित किया गया तो उसने न्यायालय से प्रार्थना की कि चूंकि मैं अनाथ हूं अतः मुझे क्षमा दान दिया जाये।

श्री डांगे ने मेरे बारे में कुछ अच्छी बातें भी कहीं। उन्होंने कहा कि जनता ने मुझे जिस उच्च आसन पर बैठाया था, मैं उस पर से उतार दिया गया हूं। मैं बजात खुद यह पसन्द नहीं करता कि कोई मुझे उच्च आसन पर बैठाये। यदि किसी ने ग़लती से मुझे उच्च आसन पर बैठा भी दिया था, तो यह अच्छी बात है कि उन्होंने मुझे वहां से उतार दिया। यह बात मेरे लिए और उनके लिए अच्छी ही हुई है।

श्री डांगे ने यह भी कहा कि केरल में की गयी कार्यवाही के संबंध में भारत के बहुत से लोगों में, जिनमें कांग्रेस के लोग भी सम्मिलित हैं, बड़ा रोष है। उनके द्वारा इस बात का जिक्र करना बिल्कुल ठीक था। उन्होंने शायद पता होगा कि समाचारपत्रों में भी समाचार आये हैं कि इस मामले पर विचार करने के लिए संसदीय कांग्रेस दल की तीन लम्बी-लम्बी बैठकें हुई थीं। जिन में लोगों ने बिल्कुल स्वतंत्रता पूर्वक अपने विचार प्रकट किये, जैसा कि उन्हें चाहिए था। पर आप जानते हैं कि ऐसा क्यों किया गया ? इसका अभिप्राय यह था कि चूंकि काग्रेस दल लोकतंत्र व वैधानिक प्रक्रिया में विश्वास रखती है अतः वह जानने के लिये आतुर थी कि ऐसा काम क्यों किया गया जिसे अलोकतंत्रात्मक कह कर उसकी आलोचना की गयी। इस से पता लगता है कि काग्रेस दल का स्वरूप क्या है। जब उसकी अपनी सरकार ने एक काम किया या एक कदम उठाया, तो उसने उसे आंख मूंद कर स्वीकार नहीं कर लिया। वह चाहती थी सारे तत्थ्यों व सारी बातों को जानना ताकि उसके सदस्य या समूह अपनी राय कायम कर सकें। उन तीनों बैठकों में हमने देखा कि मोटे तौर पर वे लोग जो केरल में हुई घटनाओं के बारे में जानते थे—उन में से अधिकांश लोग केरल हो भी आये थे—एक मत थे। उनके मन में कोई संदेह नहीं था। कुछ लोगों के मन में जो वहां नहीं गये थे और जिन्हें वहां की घटनाओं के बारे में सारा हाल पता नहीं था, कुछ शंकायें थीं। पर जब उनके सामने इन बैठकों में सारी बातें रक्खी गयी, तो उनके मन में भी कोई शंका नहीं रह गयी। तो मैं यह बता रहा था कि कांग्रेस के आम लोग तथा कांग्रेस के महत्वपूर्ण सदस्य इस प्रकार काम करते हैं। वे हर बात को समालोचक की दृष्टि से देखते हैं। मेरा निवेदन है कि जब हमारी

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पार्टी के लोग सदियों से इस वातावरण में पले हैं कि वह किसी बात को बिना समझे बूझे आंख मूंद कर मानने को तैयार नहीं हो जाते, जब वे हर बात की आलोचना व प्रत्यालोचना करते हैं, तो क्या इस पार्टी के नेताओं के लिए यह संभव था कि वे कोई ऐसा काम कर सकते, जिसका दल के लोग घोर विरोध करते हों । स्पष्ट है कि ऐसे किसी भी काम से हम में बड़ी अशांति फैल जाती; जब हम परिस्थितियों के कारण बिल्कुल मजबूर ही हो गये, तभी हमने ऐसा कदम उठाया । मैं बताना चाहता हूं कि इस संबंध में हम ही नहीं बल्कि सब ही परिस्थितियों से मजबूर हो गये थे । पर वे परिस्थितियां कैसे पैदा हुईं, यह एक दूसरी बात है जिस पर हम बिचार कर सकते हैं ।

श्री गोपालन ने अपने भाषण के अन्त में इस बात का खण्डन किया, जैसा कि कहा गया था, कि साम्यवादी दल के नेता भी चाहते थे कि केन्द्र हस्तक्षेप करे । उन्होंने राष्ट्रपति की उद्घोषणा निकलने के ३ या ४ दिन पूर्व अपनी तथा श्री अजय घोष की मेरे साथ हुई भेंट का भी जिक्र किया । वैसे मैं व्यक्तिगत भेंट का उल्लेख करना सामान्य रूप से पसन्द न करता पर चूंकि उन्होंने उसका जिक्र कर दिया है अतः मुझे आशा है कि आप मुझे उसके बारे में कुछ कहने की अनुमति देंगे ।

श्री अजय घोष तथा श्री गोपालन ने मुझ से स्पष्ट शब्दों में यह नहीं कहा कि केन्द्र इस मामले में हस्तक्षेप करे । पर यह बात मैं निश्चित रूप से कह सकता हूं कि उनकी बातचीत से मेरा यही ख्याल हुआ कि वे केन्द्र के हस्तक्षेप का स्वागत करेंगे । वास्तव में श्री अजयघोष तथा श्री गोपालन ने विमोचन समर समिति द्वारा दी गयी उस धमकी का उल्लेख किया कि ९ तारीख को समिति सचिवालय पर एक विशाल भीड़ लेकर जायेगी और उस पर कब्जा कर लेगी ।

निश्चय ही, मेरी राय में वह एक बिल्कुल गलत बात थी । लेकिन जो कुछ भी मुझ से कहा गया उसका मतलब यह था कि मैं इस ९ अगस्त वाली घटना को ही नहीं बल्कि इस सारे आन्दोलन को रोकूं अन्यथा जितनी जल्दी मैं हस्तक्षेप करूं उतना अच्छा होगा । लेकिन इस संबंध में मैं अपने विचार प्रकट कर सकता था और यह भी कह सकता था कि सब अनुचित है पर उस समय या उसके पूर्व भी उस महान आन्दोलन को रोकना मेरे बस की बात नहीं थी । वैसे यदि मैं राज्य का प्रभारी होता और मेरी सरकार ऐसी इच्छा प्रकट करती तो मैं सरकार के बल से ऐसे आन्दोलन का सामना कर सकता था । यह एक दूसरी बात है । पर मैं जानता था कि उस समय आन्दोलन ऐसी स्थिति में पहुंच गया था कि मेरे लाख करने पर भी वह एकाएक रुक नहीं सकता था । अतः मैं ने यही निष्कर्ष निकाला कि जितनी जल्दी यह उद्घोषणा निकाली जाये, उतना ही अच्छा हो ।

जब यह उद्घोषणा निकली—मैं अपने मन की बात बता रहा हूं—तो कांग्रेस दल के मेरे बहुत से साथियों के मन में बड़ी चिंता पैदा हो गई पर साम्यवादी दल को इस से काफी शान्ति मिली । और यह स्वाभाविक भी है । (**अन्तर्बाधा**) मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि वे लोग शुरू से ही चाहते थे कि केन्द्र हस्तक्षेप करे । पर इतना मैं जरूर कहूंगा कि एक ऐसी स्थिति पैदा हो गयी थी, जिसे संभाल पाना या जिसका सामना कर पाना उनके लिए बहुत ही कठिन हो रहा था ।

मुझे बताया गया कि वहां इसके भीषण व भयानक परिणाम होंगे, बड़े पैमाने पर मार-काट होगी और न जाने क्या क्या होगा । कोई भी सरकार, चाहे, वह साम्यवादी सरकार हो या गैर-साम्यवादी, इन बातों को पसन्द नहीं करती । अतः उनके सामने एक बड़ी कठिनाई थी । मैं समझ सकता हूं कि वे कितनी कठिनाई में थे और यदि ऐसी स्थिति में कोई भी सरकार होती तो वह भी उस कठिनाई का अनुभव करती अवश्य । अतः और कोई रास्ता नहीं था सिवाय इसके कि केन्द्र हस्तक्षेप करे या फिर स्थिति का सामना किया जाये, जिसके कि भयानक परिणाम

होते; मारकाट व क्षति के अतिरिक्त लोगों में कटुता होती जो कि हो सकता है कि चुनावों तक या उसके बाद भी रहती और समझदार राजनीतिज्ञ होने के नाते उन्हें यह पसन्द नहीं था । ऐसी स्थिति में वे कर ही क्या सकते थे। केन्द्रीय हस्तक्षेप के अतिरिक्त उनको ओर कोई त्राण था ही नहीं ।

†**श्री अ० क० गोपालन** : मेरा कहना है कि प्रधान मंत्री ने जो कुछ कहा है वह गलत है । मैं उसका खण्डन करता हूं ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : आप किस बात का खण्डन करना चाहते हैं ?

†**श्री अ० क० गोपालन** : आप कह रहे हैं कि हमने आप से कहा था "हमें बचाने के लिए कृपया हस्तक्षेप करें" । मैं श्री अजयघोष के साथ था । उन्होंने यह नहीं कहा था ।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू**: जहां तक मुझे याद आता है उन्होंने ये शब्द कहे थे: "यदि आप यह सब रोक नहीं सकते, तो जितनी जल्दी आप कार्यवाही करें उतना ही अच्छा है ।

†**श्री अ० क० गोपालन** : उन्होंने जो शब्द कहे थे वह ये थे : "क्या आप हमें बता सकते हैं कि आप ने क्या निर्णय किया है । क्या आप हस्तक्षेप करने जा रहे हैं?" उन्होंने पूछा था कि केन्द्रीय सरकार ने क्या निर्णय किया है । (**अन्तर्बाधा**)

†**उपाध्यक्ष महोदय** : मैं दोनों ओर के सदस्यों से शान्त रहने की प्रार्थना करूंगा । प्रधान मंत्री अपना भाषण जारी रक्खें ।

†**श्री जवाहर लाल नेहरू**: माननीय सदस्य ने जो शब्द बताये उनका भी उन्होंने इस्तेमाल किया था । पर केवल इतना ही नहीं, उन्होंने यह बात भी कही थी, जो मैंने बताई है । मैंने उन्हें उत्तर दिया था कि हम अभी तक किसी अन्तिम निश्चय पर नहीं पहुंच सके हैं पर जो कुछ भी हो रहा है उस से हम उसी दिशा में बढ़ रहे हैं। (**अन्तर्बाधायें**) खैर, मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहता पर मेरा निवेदन है कि जिस समय यह उद्घोषणा निकाली गयी थी, उसके आस पास हम एक ऐसी स्थिति पर पहुंच चुके थे कि केरल में एक बड़े पैमाने पर संकट उत्पन्न हो जाने के अलावा और कोई रास्ता ही नहीं था । मेरा कहना है—मेरा ख्याल है— कि केवल अन्य लोगों की ही ऐसी धारणा नहीं थी बल्कि घटनाओं की परिस्थितियों से मजबूर होकर हमारे बहुत से साम्यवादी मित्र भी इसी निश्चय पर पहुंच चुके थे —खुशी से नहीं बल्कि मजबूरन ।

जिस स्थिति मे आकर यह उद्घोषणा निकाली गयी उस समय केवल यह बात नहीं थी कि अन्य कोई मार्ग ही नहीं था बल्कि बात यह भी थी कि सभी लोग एकमत थे कि उद्घोषणा निकाली जाये ।

यह कहा जा सकता है कि जिस समय उद्घोषणा निकाली गयी वह तो उद्घोषणा निकालने के लिए उपयुक्त समय था पर उस से पहले की स्थिति के बारे में क्या हुआ ? माननीय सदस्या, श्रीमती चक्रवर्ती के प्रश्न का भी उत्तर दिया जा सकता है । माननीय सदस्या का प्रश्न था कि "पहले की स्थिति में क्या हुआ ; यह एक षडयंत्र था और अपने अनुच्छेद ३५२ के अधीन या ऐसे किसी अन्य साधन से इसको रोकने के बजाय तरह-तरह से उसे प्रोत्साहित किया "।

अभी कुछ समय पूर्व श्री गोपालन ने पूर्व मेरे कई भाषणों के उद्धरण दिये । समाचार संवाददाताओं के बीच मैंने कई बार केरल में होने वाली सीधी कार्यवाही, स्कूलों में होने वाले पिकेटिंग बसों को रोकने तथा सरकारी दफ्तरों में तथाकथित सीधी कार्यवाही की निन्दा की थी । ऐसी बातें

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

मैंने ३ या ४ अवसरों पर कहीं। मैं मानता हूं कि इतना ही काफी नहीं था। हमें और अधिक बार तथा और जोरदार शब्दों में ऐसा कहना चाहिए था ।

हम पर आरोप लगाया जाता है कि यह हमारा एक षडयंत्र था कि हम दूसरों से कुछ ऐसे काम करावें जिस से एक ऐसी स्थिति पैदा हो जाये कि हम इस प्रकार की कार्यवाही कर सकें। उनका कहना है कि यह षडयंत्र तब से चल रहा है जब केरल सरकार सत्ता में आई थी। श्री डांगे के कथनानुसार उसी समय श्री श्रीमन्नारायण वहां गये थे और उन्होंने अपनी राय दी थी कि वहां विधि और व्यवस्था खतरे में है । श्री डांगे का यह कथन सही नहीं है। यह सच है कि श्री श्रीमन्नारायण वहां गये थे पर वह अपने एक पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार केरल प्रदेश कांग्रेस समिति की एक बैठक में भाग लेने गये थे । और उस समय उन्होंने यह बात नहीं कही थी। वह बात तो उन्होंने उस के ५ या ६ महीने बाद कही थी।

मैं ने खुद उन से पूछा है और उसी आधार पर मैं यह कह रहा हूं कि जब केरल में हत्या आदि के अभियुक्तों को बड़े पैमाने पर छोड़ दिया गया था, उस समय उन्होंने पहली बार कहा था कि इस से वहां काफी आशंका फैल रही है। ५ या ६ महीने बाद जब वह दोबारा वहां गये, तब उन्होंने कहा कि वहां जनता में असुरक्षा की भावना फैली हुई है। वास्तव में लगभग एक वर्ष पूर्व शायद पिछले वर्ष मैं ने भी कहा था कि मुझे पता लगा है कि केरल की जनता में असुरक्षा की भावना व्याप्त है। इस बात में कोई संदेह नहीं था। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि वहां क्या स्थिति थी पर बहुत से लोगों का ऐसा खयाल था ।

उसके बाद, श्री ढेवर को भी उस मामले में घसीटा गया है और कहा गया है कि उन्होंने लोगों को भड़काया व उत्तेजित किया । जिस रूप में उनको घसीटा गया है, उसके लिए मुझे बड़ा दुःख है क्योंकि मैं जानता हूं कि श्री ढेवर एक ऊंचे चरित्र के व्यक्ति हैं और उनके लिए मेरे हृदय में बहुत सम्मान है ।

सभा को पता है कि गत वर्ष विरोधी दल के एक सदस्य द्वारा इन मामलों के बारे में एक प्रस्ताव सभा में रखा गया था और जैसा बताया जा चुका है उस मामले में सरकार का रवैया—गृहकार्य मंत्री का रवैया—मामले को सभा में बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन देने का नहीं था । यह बात नहीं है कि केरल में होने वाली विभिन्न घटनाओं की चिन्ताजनक खबरें हमें न मिलती रही हों । गृहकार्य मंत्री के पास वहां के राज्यपाल के अनेकों व्यक्तिगत पत्र आते रहे थे। वहां के मुख्य मंत्री के पास भी गृहकार्य मंत्री ने पत्र भेजे और उन्होंने पूछा था की उद्घोषणा जारी करने से पहले संविधान के अमुक अनुच्छेद के अधीन चेतावनी क्यों नहीं दी गई । वास्तव में, अनेक बार कुछ बातों के संबंध में मित्रतापूर्ण पत्र भेजे गये। कभी-कभी मुख्य मंत्री उनके सुझावों को स्वीकार कर लेते थे और कभी-कभी स्वीकार नहीं करते थे। इस प्रकार की स्थिति चल रही थी।

अतः हमें चिन्ता रहती थी पर हस्तक्षेप करने का ख्याल हमारे दिमाग में कभी नहीं आया । हां इतना जरूर था कि जब यहां बात उठाई गयी थी और कई प्रकार के आरोप लगाये गये थे तो हमने इस बात पर विचार किया था कि क्या इस संबंध में जांच कराना उचित होगा ? पर हस्तक्षेप करने का ख्याल तो हमारे दिमाग में कभी भी नहीं आया ?

अभी लगभग २ या ३ महीने पहले जब मैं उटकमंड में था, तो मैं ने केरल की गड़बड़ के बारे में अखबारों में पढ़ा तथा अन्य बातें भी सुनीं । पर मुझे कुछ भी ज्ञान न था कि स्थिति कितने

†मूल अंग्रेजी में

आगे पहुंच चुकी है। केरल की इस नई स्थिति के बारे में सब से पहले मुझे केरल सरकार के एक मंत्री ने बताया था । उनकी बातें सुन कर मुझे आभास हुआ कि वहां की स्थिति कितनी गम्भीर थी। बाद में कांग्रेस के लोगों से तथा अन्य साधनों से मुझे अन्य बहुत सी बातें मालूम हुईं। उस समय मेरे दिमाग मे एक मामूली सा ख्याल था कि अगर मैं केरल जाऊं तो शायद उस स्थिति को सुधारने में कुछ सहायता कर सकूं ।

उसके बाद जब श्री मन्नत पद्मनाभन् ने स्कूलों में धरना देने तथा स्कूलों को खुलने न देने की धमकी दी, तो मामला सामने आया । हमारे सामने उस समय केवल यही मामला आया था और कुछ कांग्रेस के लोग इसे हमारे सामने लाये थे। हमने कहा था कि यह बिल्कुल गलत बात है और "आप किसी भी शर्त पर उस में भाग नहीं ले सकते" ॥ यह थी राय जो हमने उस वक्त दी थी ।

लेकिन हम ने यह महसूस करना शुरू किया कि हमारे राय देने या राय न देने के बावजूद भी, केरल में जो भी घटनायें हो रही हैं, वे ऐसी स्थिति पैदा कर रही हैं कि उनके लिए कोई भी उचित राय प्रभावी नहीं हो सकती । उसी समय मैंने एक वक्तव्य निकाला था, जिस में मैंने कहा था कि यह एक विशाल जन आन्दोलन है ।

बाद में यह देख कर हमें बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह आन्दोलन बढ़ता ही जा रहा है । एक बात जिसकी मुझे आशा नहीं थी —हम में से किसी को आशा नहीं थी—वह यह थी वहां कुछ कांग्रेसी लोगों को धरना देने से मना कर दिया गया था । उन्होंने धरना दिया भी नहीं। वैसे मैं व्यक्तिगत कांग्रेसियों के बारे में कुछ नहीं कह सकता ; हो सकता है कि उन्होंने धरना दिया हो, पर अधिकृत रूप से उन्होंने धरना नहीं दिया था। बस वाले मामलों में भी उनका हाथ नहीं था । वे सिर्फ़ "प्रतीक धरना" देने में भाग लेते थे। मैंने और हम में से किसी ने भी इस बात को अच्छा नहीं कहा। इसे अच्छा कहना हमारे लिए एक गलत बात होती । फिर भी मैं आप के सामने यह स्वीकार करता हूं कि हम एक बड़ी कठिनाई में पड़ गये थे। कुछ दिनों बाद जब मामला यहां आया तो हमारे सामने यह एक बड़ी कठिनाई थी क्योंकि लोग इस में सम्मिलित हो चुके थे। और यह आन्दोलन धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था । हम इस बात के लिए आतुर थे कि किसी तरह धीरे-धीरे किसी उपाय से इस आन्दोलन को—सीधी कार्यवाही तथा अन्य बातों को—रोका जाये क्योंकि हम जानते थे कि उस समय परिस्थिति ऐसी थी कि "ऐसा मत करो" आदेश का कोई भी प्रभाव न होता ॥

अतः यदि आप को स्मरण हो, तो आप देखेंगे कि कांग्रेस संसदीय बोर्ड के संकल्प में बसों पर धरना देना तथा सीधी कार्यवाही आदि की बड़ी निन्दा की गयी थी पर उस में एक परन्तुक भी था —परन्तुक वहां होना चाहिये था या नहीं, इस बात से आप सहमत हों या न हों, यह एक अलग बात है पर स्थिति को देखते हुए परन्तुक का होना आवश्यक ही था—हमने उन से कहा था कि इस झमेले में से निकल आइये, ज्यादा से ज्यादा आप इस समय प्रतीकात्मक कार्य कर सकते हैं पर धीरे-धीरे अलग हो जाइये। यह था जो उस संकल्प में कहा गया था क्योंकि हम चाहते थे कि वे इससे बिल्कुल निकल आयें और अन्य लोगों को भी इससे निकलने के लिये कहें। हमने कहा कि आप सभायें, प्रदर्शन तथा काम कर सकते हैं पर यह काम नहीं, क्योंकि मैं स्वयं सीधी कार्यवाही के खिलाफ हूं । यह एक गलत बात है ।

अभी दो दिन हुए आचार्य कृपालानी ने सत्याग्रह तथा सीधी कार्यवाही की प्रशंसा में अनेक बातें कहीं । मैं इस मामले में उन से तर्क करने में सक्षम नहीं हूं। मैं यह नहीं कह सकता कि सभी प्रकार के सत्याग्रह पर रोक लगाई जानी चाहिए ; अनेक अवसरों पर सत्याग्रह करना उचित हो

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सकता है । पर जब हम सत्याग्रह शब्द का प्रयोग करते हैं, तो हमारे लिये सत्याग्रह के मूल तत्वों को जान लेना जरूरी है । सभा को स्मरण होगा कि पहले जब सत्याग्रह तथा सीधी कार्यवाही आदि बहुत मामूली बातें थी, तो किस तरह गांधी जी ने उन्हें रोका क्योंकि गांधीजी जानते थे कि यह सब गलत हो रहा है और उन्होंने उसे रोका । उनका तो यहां तक कहना था कि भारत में वही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो सत्याग्रह कर सकते हैं । अतः मैं ने ऊपर जिन बातों का जिक्र किया है यदि आप उन्हें सत्याग्रह कहते हैं तो मैं कहूंगा कि केरल में कोई सत्याग्रह नहीं था क्योंकि मैंने ऐसी भीषण घृणा व हिंसा शायद ही कहीं देखी हो । जैसी कि वहां देखी । वैसे मैं इस विषय का कोई विशेषज्ञ नहीं हूं । फिर भी मैं यह कह सकता हूं कि वहां जितनी घृणा व कटुता थी, उस में कोई भी सत्याग्रह करना खतरनाक है । आप उसे और कुछ नाम दे सकते हैं, पर वह सत्याग्रह नहीं है ।

श्री गोपालन ने मेरे केरल जाने की चर्चा की । मैं बताना चाहता हूं कि पहले मैं ने केरल जाने की बात कुछ सोची थी । पर वहां के मुख्य मंत्री ने खुल्लम खुल्ला कहा कि इस समय वह नहीं चाहते कि मैं वहां जाऊं अतः मैंने वहां जाने का प्रश्न नहीं उठाया । श्री डांगे ने कहा कि कांग्रेस के निमंत्रण पर मैं वहां क्यों नहीं गया । इस संबंध में मेरा निवेदन है कि बिना राज्य सरकार के निमंत्रण के मैं किसी भी राज्य में नहीं जाता—सिवाय कुछ विशेष कारणों को छोड़ कर —चाहे वह कांग्रेस सरकार हो या प्रजा समाजवादी सरकार हो या साम्यवादी सरकार हो । अतः मेरे केरल जाने का प्रश्न पैदा ही नहीं हुआ । श्री निम्बूदरीपाद ने कहा था कि मुझे वहां नहीं जाना चाहिए । पर बाद में उन्होंने मुझे लिखा कि वह चाहते हैं कि मैं वहां जाऊं । अतः मैं तीन दिन के लिए वहां गया । श्री गोपालन ने एक संगठित प्रदर्शन का जिक्र किया, जो उस समय हुआ था जब मैं वहां गया हुआ था । यह बात ठीक है कि वह एक संगठित प्रदर्शन था । मैं इतनी राजनीति जानता हूं कि उस प्रदर्शन का मतलब समझ लेता । पर संगठित प्रदर्शन अनेक प्रकार, आकार तथा रवैये के होते हैं । मैं यह भी समझता हूं कि उस प्रदर्शन के सिलसिले में एक विरोधी प्रदर्शन भी संगठित किया जा सकता था — हो सकता है कि वह इतना बड़ा न होता— इस से कुछ छोटा होता पर काफी बड़ा होता । मैं ने वहां तीन दिन बिताये और हजारों व्यक्तियों से—अलग अलग व समूहों में—मिला । मैंने केरल सरकार के मंत्रियों से भी काफी देर तक बात चीत की । सार्वजनिक सभाओं, प्रदर्शनों, भीड़ भाड़ तथा अन्य बातों में भी मैं जनता की भावनाओं का पता लगाना चाहता था कि आखिर जनता की क्या इच्छा है । मुझे ऐसा लगा कि केरल की स्थिति उस से भी अधिक खराब है, जितनी कि मैं सोचता था विरोधी दलों में किसी प्रकार का समझौता होने की कोई गुंजाइश नहीं रही थी । और चारों तरफ क्रोध, कटुता व घृणा फैली हुई थी । मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और यह बात समझ में नहीं आई कि इस प्रकार आन्दोलन को कैसे चलते रहने दिया जा सकता है । जब भी मैं ने भाषण दिये मैं ने सीधी कार्यवाही की निन्दा की । मैंने कांग्रेस के लोगों से कहा कि सीधी कार्यवाही निन्दनीय है । पर वह समय दार्शनिक राय देने का नहीं था बल्कि एक कठिन स्थिति को हल करने का समय था । शिक्षा अधिनियम के संबंध में मैं ने एक सुझाव दिया कि इसके विवाद ग्रस्त खण्डों के संबंध में इसके आलोचकों से क्यों न बात चीत की जाये । मुझे प्रसन्नता थी कि वे इस बात पर सहमत हो गये । उसके बाद मैं स्कूलों के मैनेजरों तथा पादरियों तथा अन्य व्यक्तियों से, नायर सर्विस सोसायटी तथा अन्य लोगों से मिला, कांग्रेस का स्कूलों से कोई संबंध नहीं था । मुझे बड़ा खेद हुआ कि ये लोग इस प्रकार बातचीत करने के लिए इच्छुक नहीं थे । उन्होंने इस बात का जो कारण बताया वह भी ठीक ही था । उन्होंने बताया कि पहले वे बात करने के इच्छुक थे पर ऐसा नहीं हो सका, और अब जब विवाद इतना बढ़ चुका है और सारा वातावरण संदेह से भरा हुआ है, तो कैसे बात कर सकते हैं । इस में अवश्य कुछ दाल में काला है ।

फिर भी, मैं ने उन्हें गांधी जी द्वारा दी गयी शिक्षा का स्मरण कराया कि शत्रु से भी बात करने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए । मैं ने कहा कि आप अपने सिद्धांतों पर अटल रहें, उन्हें कदापि न छोड़ें, पर बात तो करें । मुझे खेद है कि इतना सब कुछ कह कर भी मैं उन्हें समझा नहीं पाया । पर मैं ने यह समझ लिया कि शिक्षा अधिनियम झगड़े की मूल जड़ नहीं था । अतः जब मैंने देखा कि और कोई रास्ता नहीं है, तो मैं ने केरल के मुख्य मंत्री तथा अन्य मंत्रियों को सुझाव दिया कि अब तो चुनाव ही इस समस्या का हल है । ध्यान रहे कि मैंने केन्द्रीय हस्तक्षेप की बात नहीं कही थी । मैं ने सिर्फ चुनाव की बात कही थी । यह एक सुझाव था । मैं ने बताया कि स्थिति ऐसी नहीं थी कि डरा धमका कर या कठोर शब्दों का प्रयोग कर के स्थिति का सामना किया जा सकता था क्योंकि दोनों ओर लोग क्रोधान्मत्त थे । प्रत्येक व्यक्ति क्रोध में उन्मत्त था । मैं इसके औचित्य व अनौचित्य की बात नहीं करना चाहता पर यह सत्य है कि चारों ओर घृणा, क्रोध व हिंसा की भावना फैली हुई थी । मैं नहीं जानता यह कहां तक सही है पर मुझे पता लगा कि केरल के कुछ भागों में रहने वाले लोग बड़े-बड़े छुरे रखते हैं और क्रोध आने पर वे उनका प्रयोग करने में तनिक भी संकोच नहीं करते । नित्य प्रति ऐसी घटनायें हो रहीं थी । छुरे बाजी की घटनायें हम लोगों ने सुनीं ।

मैं ने इस लिये चुनावों का सुझाव दिया था । मेरी समझ इतनी अबकचरी नहीं है कि मैं समझता कि चुनावों से समस्या हल हो जायेगी । मैं समझता था कि चुनावों से केरल का मसला हल नहीं होगा । लेकिन मैं ने सोचा यह था मेरा मकसद था कि चुनावों का फैसला करते ही संघर्ष में कुछ ढिलाई आ जायेगी, लोग लड़ना कुछ बन्द कर देंगे । कुछ "डिसएनगेजमेंट" हो जायगा, जैसा कि यूरोप में जर्मनी के और कुछ दूसरे मसलों के बारे में कहा जाता है । मैं "डिसएनगेजमेंट" शब्द के उसी मायने को यहां ले रहा हूं । मैं चाहता था कि संघर्ष में कुछ ढिलाई आये । और अगर चुनावों की बात मान ली गई होती, तो हालत में तब्दीली आ जाती । मैं यह नहीं कहता कि दोनों तरफ के लोग एक दूसरे के गले मिलने लगते, लेकिन हां, वे लड़ाई के लिये इतने आमादा भी नहीं रह जाते, नफरत का जहर कुछ उतरने लगता और एक दो महीनों में लोग चुनावों की तैयारियों में लग जाते । यह तो है कि आपस में उनकी गालियां बन्द नहीं होती, लेकिन हां आन्दोलन जरूर बन्द हो जाता और लोगों को शिक्षा अधिनियम वगैरह के मसलों पर बात करने का मौका मिल जाता । केरल से लौटने से पहले मैंने इसी का सुझाव दिया था ।

वहां से लौटने के बाद भी मैं ने एक-दो मौकों पर इसी बात को दोहराया था । या तो प्रेस कान्फ्रेंस में या मुख्य मंत्री के नाम अपने पत्र में, और अन्य कई तरीकों से मैंने इसी बात को कहा था । इसीलिये कि मैं समझता था कि सिर्फ वही एक रास्ता रह गया था । और हो भी क्या सकता था ? सिर्फ दो ही तरीके रह गये थे । एक तो यह कि इस आन्दोलन को ताकत से कुचल दिया जाता, लेकिन वह ठीक नहीं होता । पुलिस और फौज की ताकत से बड़े से बड़े आन्दोलन को, किसी भी आन्दोलन को कुचला तो जा सकता है, लेकिन उसकी कीमत बहुत ज्यादा चुकानी पड़ती है और उसके नतीजे तो और भी ज्यादा बुरे निकलते हैं । हो सकता है कि मेरी यह समझ गलत हो । केरल के मंत्रियों ने कहा था कि अगर यह किया जाता तो सारी चीज अपने आप ठंडी पड़ जाती । लेकिन मेरा ख्याल है कि उनका सोचना ग़लत था, कम से कम उस समय तो ग़लत था ही । हो, उस से पहले शायद सही रहा हो, यह बात लागू होती हो ।

दूसरा तरीका यह था कि आन्दोलन को जब तक भी वह चलता, जारी रहने दिया जाता । वह भी बहुत खतरनाक था, क्योंकि सरकार का काम चलना ही उसकी वजह से नामुमकिन हो गया था । आप अच्छी तरह से समझ सकते हैं कि सरकार के रोजाना के काम भी ठीक तरह से नहीं चल पा रहे थे । सरकारी काम सिर्फ अफसरों आदि वगैरह तक ही रह गया था । जब हर मंत्री के सामने ऐसे टेढ़े सवालात खड़े हों और उसके चारों तरफ छुरेबाजी, आग लगने, जुलूसों और

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

गिरफ्तारियां वगैरह का हंगामा चल रहा हो, तो सरकार के रोजाना के काम चल भी कैसे सकते हैं। एक छोटे से राज्य में अगर इतने बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां हों, तो वहां सरकार का रोजाना का काम चल ही नहीं सकता ।

मुझे उस सब से बाहर निकलने का और दूसरा कोई रास्ता ही नहीं दिखा, सिवाय इसके कि किसी दूसरी बात की तरफ ध्यान दिलाया जाये ।लोग लड़ाई पर इतने आमादा न रहें और संघर्ष में कुछ ढिलाई पैदा की जाये। और इसका एक ही तरीका मुझे दिखाई दिया; चुनावों का तरीका। मैं फिर से आपकी तवज्जह दिलाना चाहता हूं कि चुनावों का मतलब राष्ट्रपति की उद्घोषणा कतई नहीं थी। चुनावों की पहल कदमी तो असल में केरल सरकार ही करती और उस से केरल सरकार को कई फायदे भी होते। मैंने यही बात उन से कही भी थी। उन्होंने मेरी बात तर आपस में बैठ कर गौर भी किया होगा, लेकिन वे इस पर राजी नहीं हुए। मैं आखिर तक यही सलाह देता रहा। एक दो बार तो कुछ ऐसा लगा भी कि शायद वे मेरी सलाह मान जायेंगे। लेकिन वे नहीं ही माने । और यह तब जब कि वे अच्छी तरह जानते थे कि चुनावों की बात न मानने का मतलब होगा राष्ट्रपति की उद्घोषणा और उस के बाद चुनाव। मेरी सलाह तो सिर्फ चुनावों की थी । यह नतीजा तो हर समझदार आदमी निकाल सकता था । और वे इसे बड़ी अच्छी तरह समझ चुके थे ।

उनके सामने दो ही रास्ते रह गये थे; या तो वे पहले चुनाव कराने के लिये तैयार हो जायें या राष्ट्रपति की कार्यवाही के बाद चुनावों की बात मानें। मैं तो बिल्कुल यही समझता हूं कि उन्होंने इन दोनों मुमकिनात के बारे में काफी बरीकी और गहराई से और काफी अर्से तक सोच-विचार किया होगा । मेरा अपना अनुमान है कि सोचने विचारने के बाद उन्होंने यही नतीजा निकाला होगा कि यह पहले चुनाव करान की बात मान लेना अपनी नाकामयाबी मान लेना होगा और तब उस हालत में वे केन्द्रीय सरकार के सिर पर इतना दोष भी नहीं मढ़ सकेंगे, शिकायत भी नहीं कर सकेंगे, । शायद इसीलिये उन्होंने फैसला किया कि "हम आखिरी दम तक डटे रहेंगे। केन्द्रीय सरकार की ओर से ही कार्यवाही होगी और तब हम उसके खिलाफ लोक तंत्र का झंडा उठा सकेंगे।" केरल में जो कुछ भी हुआ, उसका यही व्यौरा है । इस में लाग-लपेट की कोई बात नहीं है । हम तो यह सब न होने देने के लिये, यह सूरत पैदा न होने देने के लिये, कोशिश कर रहे थे, इस से बाहर निकलने का रास्ता तलाश कर रहे थे और यह सिर्फ इसीलिये नहीं कि हमें लोक तंत्र के उसूलों से लगाव है बल्कि इसलिये भी कि हम उस स्थिति के अमली नतीजों से बचना चाहते थे, उस में नहीं पड़ना चाहते थे।

एक और भी छोटी सी बात है । बात छोटी सी है, लेकिन काफी अहम है । इस कार्यवाही को कुछ दिन और रोके रखने से केन्द्रीय सरकार का काफी फायदा हो सकता था अगर वह केरल सरकार और कम्युनिस्ट पार्टी को गलत साबित करना चाहती । अगर यह कार्यवाही कुछ ही दिन तक और न की जाती तो मुझे पूरा यकीन है कि केरल की हालत और भी ज्यादा बिगड़ जाती। केरल सरकार की मुसीबत बढ़ती जा रही थी, और तब उसे मजबूर होकर आन्दोलन के दमन करने, उसे दबाने के लिये सख्त से सख्त कार्यवाही का रास्ता अपनाना पड़ता ।

†**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती** (बसिरहाट) : आप हर अवस्था पर कम्युनिस्ट पार्टी को बचाने की कोशिश का ही दावा कर रहे हैं ।

---

†मूल अंग्रेजी में

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : श्री अजय घोष ने यह महसूस कर लिया था। वह जब मेरे पास आये, तो उन्होंने कहा था : "अगर आप कार्यवाही करना चाहते हैं तो जल्द कीजिये। देर मत कीजिये"। जाहिर है कि वहां हालत इतनी बिगड़ चुकी थी कि राष्ट्रपति की उद्घोषणा होती या न होती, हमें केरल में पुलिस या फौज लेकर जाना ही पड़ता। इसमें तो शक की कोई गुंजाइश ही नहीं।

एक दलील बार बार दोहराई गई है कि संविधान के अनुच्छेद ३५२ या शायद ३५५ के मुताबिक हमें केरल सरकार की मदद करनी चाहिये थी। मैं समझ ही नहीं पाता कि इसका मतलब क्या है। राष्ट्रपति की उद्घोषणा से पहले भी, मैं ने केरल के मुख्य मंत्री से साफ-साफ पूछा था कि वह हम से किस तरह की मदद चाहते हैं। हमने उनको जो भी मदद दी, उसके अलावा उन्होंने हमसे कोई भी और मदद कभी नहीं मांगी। केरल के मुख्य मंत्री ने जवाब दिया था कि वह नैतिक मदद चाहते हैं, हमारी ताकत की मदद नहीं। नैतिक मदद का मतलब तो यही होता है कि हमें आन्दोलन की और भी ज्यादा जोर से निन्दा करनी चाहिये थी। मैंने आन्दोलन को बुरा बताया था। लेकिन मेरे दिमाग में एक चीज़ बिल्कुल साफ थी। मैं ने आन्दोलन के तरीके की बुराई की थी, क्योंकि धरना देने की बात पर मुझे ऐतराज़ था। लेकिन जनता द्वारा अपनी राय जाहिर करने को मैंने बुरा नहीं बताया था। मेरा ख्याल है कि वह चीज़ सही थी। मैं ने कहा था कि जनता और जैसे भी पसन्द करे अपनी राय जाहिर कर सकती है, लेकिन कम से कम यह तरीके तो ठीक नहीं हैं। मैंने ठीक यही शब्द इस्तेमाल किये थे। उसे कम से कम सत्याग्रह तो मत कहिये, क्योंकि मैं समझता हूं कि गुस्से और नफरत से भरे किसी भी आन्दोलन को सत्याग्रह का नाम नहीं दिया जा सकता है। मैं ने कहा था कि आप आन्दोलन चलाइये, मैं जनता की राय जाहिर करने के आन्दोलन को बुरा नहीं मान सकता। लेकिन उस आन्दोलन को इस तरह की सीधी कार्यवाही से तो अलग रहना चाहिये। पर किसी ने भी मेरी बात पर कान नहीं दिया। वैसी हालत में शायद कोई भी मेरी बात पर कान नहीं देता। यहां बार बार यह दलील दी गई है कि संविधान के एक खास किसी अनुच्छेद के मुताबिक हमें केरल सरकार की मदद करनी चाहिये थी।

एक साल या उस से भी कुछ पहले यह केरल सरकार बनने के करीब एक साल बाद, केरल के मुख्य मंत्री ने एक भाषण दिया था। उस भाषण में 'गृह-युद्ध शब्द' का भी इस्तेमाल किया गया था और इसीलिये उस वक्त उसकी काफी चर्चा भी हुई थी। वह कोई महत्वपूर्ण भाषण नहीं था। लेकिन फिर भी दिलचस्प तो था ही। दिलचस्प भी इस मायने में कि उससे उनके सोचने के तरीके की झलक मिलती थी। मेरे पास उसके बारे में एक नोट मौजूद है।

"केरल के मुख्य मंत्री ने विरोधी दलों को चेतावनी दी कि यदि वे सब मिलकर केरल की कम्युनिस्ट सरकार को उलटने की कोशिश करेंगे, तो उस से जनता दो गुटों में बंट जायेगी और देश में अव्यवस्था फैल जायेगी। श्री नम्बूद्रीपाद का विचार था कि इस से एक ऐसी परिस्थिति पैदा हो जायेगी जिस में दो परस्पर विरोधी समूह एक दूसरे को बिल्कुल तहस-नहस कर देने की नीति अपना लेंगे और समूचे राष्ट्र के लिये उसका बड़ा दुखद परिणाम होगा। उन्होंने साथ में यह भी बताया कि चीन में ऐसी ही परिस्थिति पैदा होने के कारण बड़े लम्बे अर्से तक गृह-युद्ध चला था।" (**अन्तर्बाधायें**।)

यह भाषण आज से एक साल के अर्से से भी पहले, ३१ मई, १९५८ को दिया गया था। लेकिन हुआ यह कि अब केरल में एक ऐसी हालत पैदा हो गई थी जब कि न सिर्फ सभी विरोधी दल, बल्कि किसी दल से ताल्लुक न रखने वाली राजनीति से अलग रहने वाली, सारी जनता भी

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सरकार और उसके तरफ़दारों के खिलाफ एक हो गई थी। केरल के मुख्य मंत्री ने अपने भाषण में, जिस चीज का ज़िक्र किया था वही हो गया। वैसी ही हालत पैदा हो गई कि एक दूसरे के मुख़ालिफ़ दो समूह एक दूसरे के सामने डट गये। यह हालत दरअसल पैदा की गई थी। कभी-कभी तो इन दोनों समूहों के बड़े-बड़े नेता भी एक दूसरे को नेस्तनाबूद करने की बातें किया करते थे, अजीब सी बातें किया करते थे। इस तरह जैसे कि एक-दूसरे को नेस्तनाबूद करना बिल्कुल मुमकिन ही हो। लगता यह था कि जैसे कम्युनिस्ट पार्टी समझती है कि वहां बाकी केरल को वाकई नेस्तनाबूद कर सकती है, या जैसे कि उसके मुख़ालिफ़ लोग सचमुच समझते हैं कि वे सब मिल कर कम्युनिस्ट पार्टी और उसके हमदर्दों को नेस्तनाबूद कर सकते हैं। इन बातों के कोई मायने नहीं हैं; लेकिन ऐसी बातें सुनने से यह तो पता लग ही जाता है कि एक-दूसरे पर उनका गुस्सा कितना बढ़ गया था।

मैंने श्री नम्बूद्रीपाद का भाषण पढ़ा था। बाद में उन्होंने गृह-युद्ध के अपने मतलब का कुछ खुलासा भी किया था। उस वक्त यानी आज से १५ महीने पहले, मैं ने उस बात को जरा भी अहमियत नहीं दी थी। मैं ने उनके सोचने के इस तरीके को कोई ज्यादा अहमियत नहीं दी थी कि बाकी सभी लोग उनकी सरकार के ख़िलाफ़ एक हैं। कम्युनिस्ट पार्टी और उनके हमदर्दों के सोचने का यह तरीका कि कम्युनिस्ट पार्टी और उस के हमदर्दों के सिवाय और सारी दुनिया, सारे लोग उनके मुखालिफ ह, कुछ बेतुका सा लगता है।

मैं ने केरल सरकार के मंत्रियों से मुलाकात होने पर उनसे पूछा भी था कि आपने सभी लोगों को अपने ख़िलाफ़ कैसे कर लिया है, अपनी पार्टी और उस के हमदर्दों के अलावा बाकी सभी लोगों को अपने ख़िलाफ़ कैसे कर लिया है? मैं ने पूछा था कि सभी दल और सभी लोग, यहां तक कि अपने आप को मार्क्सवादी या क्रान्तिकारी मार्क्सवादी या समाजवादी कहाने वाले कुछ लोग भी, आपके मुख़ालिफ़ क्यों बन गये हैं? आपने आखिर किस नुस्खे का, किस तरीके का इस्तेमाल कर के इन सब को अपना मुख़ालिफ़ बना लिया है? मैंने इस शब्द का इस्तेमाल इसी सिलसिले में किया था। अख़बारों में तो, हमेशा की तरह, उन्होंने मेरे शब्दों को इस प्रसंग से अलग कर के अपने-अपने ढंग से पेश किया था। मैं ने जो कहा था वह इसी सिलसिले में था। मैंने उन से साफ़ कहा था कि यह आपकी एक बड़ी नाकामयाबी है, ऐसी नाकामयाबी है जिस पर हैरत होती है। मैंने यह सब उस सरकार के कामों वगैरह के सिलसिले में नहीं कहा था। मैंने उन से कहा था कि आप उन सभी लोगों की हमदर्दी खोते जा रहे हैं जिनका आप के स- कोई ज्यादा लगाव नहीं है। मैं ने कहा था कि मुझे यह सब देख कर हैरत होती है। मेरा ख्याल है कि वे मुझे इसका ठीक से पूरा-पूरा जवाब नहीं दे पाये थे। इस के जबाब में यह कहना संतोषजनक जबाब नहीं माना जा सकता कि साम्प्रदायिक संस्थाओं, पूंजीपतियों और नायरों और कुछ दूसरे लोगों ने जनता को बहका कर यह सब करने के लिये उभारा है। यह तो कोई जबाब नहीं हुआ।

कम्युनिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट सरकार की मुखालफत करने वालों में सभी तरह के लोग शामिल थे। उनमें बहुत से प्रतिक्रियावादी भ; हैं। इससे किसी को भी इन्कार नहीं। उनमें बहुत से सम्प्रदायवादी लोग भी थे। लेकिन देखने की बात तो यह है कि वे सभी आपके खिलाफ खड़े थे। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि इतनी सारी पार्टियों या जमातों के होते हुये भी, ज्यादातर इन्सान इन जमातों के बाहर ही रहते हैं। सारा दारोमदार इस बात पर है कि जमातों से बाहर रहने वाली जनता, राजनीति से अलग रहने वाली जनता की हमदर्दी किस तरफ जाती है।

मुझे पूरा यकीन है कि केरल की इस परिस्थिति में, इस मौके पर, ऐसी सारी जनता की हमदर्दी सरकार के मुखालिफ लोगों की तरफ थी। [अन्तर्बाधा]

मेरी बात गलत भी हो सकती है। लेकिन मैं तो आपको अपना ख्याल बता रहा हूं। श्री गोपालन ने अपनी स्पीच के दौरान में एक बूढ़ी महिला का दुख से भरा खत पढ़कर सुनाया था। पता नहीं उससे वह क्या साबित करना चाहते थे। मैं उनके पास बूढ़ी महिलाओं और बूढ़े आदमियों के कई खत भेज सकता हूं, जो मेरे पास रोज ही आते हैं, देश की सभी जगहों से, केरल से भी। बदकिस्मती तो यह है कि केरल से जो ऐसे खत आये हैं उनमें से ज्यादातर बड़े दर्दनाक हैं। अभी उस दिन गोपालन और उनके साथी एक स्थगन प्रस्ताव के सिलसिले में कुछ गुस्से में आ गये थे। वह एक स्थगन प्रस्ताव रखना चाहते थे जिसमें कहा गया था कि केरल में कम्युनिस्टों पर हमले किये जा रहे हैं। मेरा ख्याल है कि ऐसी बातों में शायद कुछ सचाई भी है। मैंने उनके बताये हुये ऐसे हर मामले की जांच करने की कोशिश की है। उनमें से कुछ तो बिलकुल ही बेबुनियाद निकले, और कुछ में थोड़ी सचाई भी थी। लेकिन इसका एक दूसरा भी पहलू था। बहुत से तार और खत ऐसे भी आते रहे हैं जिनमें कम्युनिस्टों द्वारा की जाने वाली छरेबाजी और हमलों की बात थी। केरल में मैं जिस सब से बुजुर्ग आदमी को जानता हूं, जो मेरे एक दोस्त और साथी हैं, और जिनके साथ मैं २९ साल पहले त्रिचूर में ठहर भी चुका हूं, उनका नाम है कुरूर नम्बूद्रिपाद। वह जब स्वतंत्रता दिवस के जलसे में शरीक होने जा रहे थे, या शायद लौट रहे थे, तब उनको कार से बाहर खींच कर पीटा गया था। कहा जाता है कि पीटने वाले कम्युनिस्ट थे। वह अभी भी अस्पताल में हैं। इस तरह की चीजें भी होती हैं .... (अन्तर्बाधायें)। मैं चाहता हूं कि आप अपने दिमांग में केरल के हालात की एक तसवीर बनाने की कोशिश करें। आप अन्दाज लगायें कि वहां कितना जबर्दस्त गुस्सा और कितनी नफरत थी, किस तरह लोग दो हिस्सों में बट गये थे और दोनों हिस्से एक दूसरे से कितना गुस्सा और कितनी नफरत करते थे। इस बात को छोड़िये कि कौन सा हिस्सा बड़ा और कौनसा छोटा है। मुझे पूरा यकीन है कि एक खास हिस्सा काफी बड़ा था, लेकिन अभी उस बात को छोड़िये। आप अपने दिमाग में केरल की तसवीर देखिये। यह एक ऐसी हालत थी जिसमें छरेबाजी होने लगी थी उसकी सिर्फ नौबत ही नहीं आई थी। यह एक काफी गम्भीर चीज थी, काफी बड़ा खतरा था। आप खुद इसे देख सकते थे। यह हालत बिगड़ती जा सकती थी, हर कहीं छरेबाजी का बाजार गर्म हो सकता था, और एक ऐसी हालत पैदा हो सकती थी जिस पर कोई भी अच्छी सी अच्छी पुलिस भी काबू नहीं पा सकती। यह किसी एक भीड़ का सवाल तो नहीं। यह सवाल तो है सभी आदमियों के छरेबाजी में शामिल होने का। इसी तसवीर को देखकर हमने तय किया था कि हमें इस सब को रोकना चाहिये और इसीलिये हमने यह कार्यवाही की। हमने ही राष्ट्रपति को यह कार्यवाही करने की सलाह दी थी। हम कुछ दिन और रुक सकते थे, और रुकना हमारे हक में एक तरह से अच्छा होता क्योंकि हालत जितती भी बिगड़ती जाती हमारी कार्यवाही उतनी ही जरूरी बनती जाती और लोग उसे उतना ही ज्यादा सही मानते जाते। लेकिन कुल मिलाकर वह ठीक नहीं होता, उचित नहीं होता, क्योंकि उतने अर्से तक जनता को और ज्यादा कीमत चुकानी पड़ती, लोगों में और ज्यादा कटुता पैदा होती जाती। सचाई तो यह है कि इस कार्यवाही के बाद से, अब केरल की हालत कहीं बहतर हो गई है। मैं यह नहीं कहता कि सारे केरल में पूरी तौर से शांति और अमन है। अभी भी एक दो जिले ऐसे हैं जहां कुछ गड़बड़ी हो जाती है। लेकिन एक मोटे तौर पर देखा जाये तो अब वहां गरमागरमी खत्म हो गई है और जनता अब उस

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

खतरनाक दौर से बाहर निकल रही है। मैं यह नहीं कहता कि वे सब एकाएक एक-दूसरे से बेहद प्यार करने लगे हैं।

इस वाद-विवाद के दौरान में कम्युनिस्ट पार्टी और कम्युनिज्म वगैरह का भी कभी-कभी जिक्र आया है। स्वभाविक है कि केरल की कम्युनिस्ट पार्टी या केरल की कम्युनिस्ट सरकार के संबंध में हमें इस विषय पर विचार करना पड़ेगा। लेकिन मेरा ख्याल है कि कम्युनिज्म या मार्क्सवाद या दुनिया भर की कम्युनिस्ट पार्टियों के बारे में कोई आम बहस करने का यह मौका नहीं है। मैं इस विषय पर बहस करने से कतराना नहीं चाहता, लेकिन उसका कोई ठीक मौका तो होना चाहिये उस बड़े सवाल को केरल जैसे स्थानीय महत्व के ऐसे एक सवाल से जोड़ना गलत होगा जिस पर कि इतनी गरमागरमी हो चुकी है। इसके विरोध में या इसके पक्ष में जो कुछ भी कहा गया है, उसमें बहुत कुछ ऐसा है जिसे मैं ठीक नहीं मानता। मैं कम्युनिस्ट नहीं हूं। कम्युनिस्ट सिद्धांत पूरी इज्जत करते हुये भी, मैं समझता हूं कि वह वक्त से पिछड़ गया है। मैं तो यही महसूस करता हूं। उसकी एक सबसे बड़ी अच्छाई यह है कि वह दबे इन्सानों की बात लेकर चलता है यह अच्छाई कम्युनिस्ट सिद्धांत की इतनी नहीं, बल्कि आम समाजवादी दृष्टिकोण की है। आप सिद्धांत को मानें या न मानें, पर यह है एक काफी बड़ी चीज। कम्युनिज्म में और आगे बढ़े हुये कम्युनिस्ट देशों में जरूर कुछ ऐसी अच्छी चीजें हैं, जिन्हें लोगों को सीखना चाहिये। फिर भी मैं समझता हूं कि कम्युनिस्ट सिद्धांत वक्त से पीछे पड़ गया है, वक्त और आगे बढ़ चुका है। और, खास तौर से कुछ मुल्कों में कम्युनिज्म को जिस तरीके से लागू किया गया है और उसकी देखा देखी कुछ और मुल्कों में लागू किया जा रहा है, वह तरीका बिलकुल गलत है।

श्री डांगे ने इस बात पर बड़ा ऐतराज जाहिर किया है कि कम्युनिस्टों की इस मुल्क में कोई जड़े नहीं हैं। मैं श्री डांगे या किसी और व्यक्ति की बात नही कह रहा हूं। लेकिन पूरे दल के सिलसिले में यह बात काफी ठीक है। मैं किसी की नुक्ताचीनी नहीं कर रहा हूं। लेकिन मैं कहता हूं कि यह एक लाजमी नतीजा है। और बुनियादी कठिनाई इसी बात से पैदा होती है। सवाल कम्युनिस्ट सिद्धांत, उसके आर्थिक सिद्धांत का नहीं है। उससे तो हम सहमत या असहमत हो सकते हैं। उसमें तो हम कुछ तब्दीलियां भी कर सकते हैं, जैसा कि कुछ कम्युनिस्ट मुल्क खुद कर रहे हैं, लेकिन कम्युनिस्ट मुल्कों से बाहर के कम्युनिस्ट नहीं कर रहे हैं। पर देश में जड़ें न होना, एक बड़ी खतरनाक चीज है। जड़ें न होने का मतलब यह भी नहीं होता कि आपके पास कोई ताकत ही नही है। जड़ें न रहते भी, आप ताकत हासिल कर सकते हैं। लेकिन जड़ें न होते हुये कुछ ताकत हासिल करने का नतीजा यह होता है कि उस ताकत को निर्माण संबंधी बुनियादी कार्यों के लिये इस्तेमाल नहीं किया जाता। वह ताकत जड़ों के जरिये कुछ रचनात्मक कार्य करने के लिये नहीं, बल्कि किसी चीज को मिटाने के लिये ही इस्तेमाल की जाती हैं। खैर यह एक बड़ी लम्बी बहस है और मैं अभी इसमें नहीं पड़ना चाहता। जो भी हो, जड़ें न होने वाली बात है ऐसी ही। और यह बात सिर्फ हमारे मुल्क ही नहीं, दूसरे मुल्कों पर भी लागू की जा सकती है। आप बाहर से तभी किसी चीज में कुछ जोड़ सकते हैं जबकि मुल्क में आपकी जड़ें हों, सांस्कृतिक जड़ें, राष्ट्रीय जड़ें या बुनियादी जड़ें, पहले से मौजूद हों। और अगर आपकी जड़ें मौजूद न हों, तो आप जहां के तहां खड़े रह जायेंगे, आगे नहीं बढ़ सकते। यदि जमीन में आपकी जड़ें मौजूद न हों, तो आप जो भी करेंगे वह अलग-अलग गमले के पौधों की तरह ही होगा, जिनका जमीन से कोई ताल्लुक नहीं होगा। और यही सबसे बड़ी मुश्किल है। देश में जड़ें पैदा न करके, जनता की ओर न देखकर कहीं और किसी और की तरफ देखना—यही वह बात है जिससे लोगों के दिमाग में शक पैदा होते हैं, और यह कठिनाइयां सामने आती हैं।

†**श्री पुन्नूस** (अम्बलपुजा) : क्या हमारी गलती यही है कि हम त्रिवेन्द्रम से दिल्ली की तरफ देखते हैं ?

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : आप दिल्ली की तरफ नहीं देखते, आप दिल्ली में आते जरूर हैं। अब इसे एक दूसरे नजरिये मे भी देखिये।

मैं कम्मुनिस्ट नहीं हूं। लेकिन मैं कम्युनिस्ट विरोधी भी नहीं हूं। मैं इसका ऐलान करता हूं। मैं किसी वाद का विरोध करने में, मैं यकीन ही नहीं रखता। मैं चीजों का विरोध करने वाला आदमी नहीं हूं, मैं विरोध करने में नहीं बल्कि कुछ ठोस काम करने में यकीन करता हूं। मेरा अपना एक विश्वास है।

आज दुनिया आगे बढ़ गई है। अब हम एक ऐसे दौर में आ गये हैं, जिसमें सिर्फ मुखालफत न करने, संघर्ष में, कशमकश में कुछ डिलाई पैदा करने, लड़ाई झगड़े से अपने को अलग रखने और शीत-युद्ध या 'कोल्ड वार' से बाहर निकलकर महा-युद्ध से बचने के लिये हर तरह की कोशिशें की जा रही हैं। हमने भी, इस मुल्क ने भी अपनी छोटी सी ताकत इसी प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में लगाई है। इसलिये कि अब हर अक्लमन्द आदमी बिलकुल साफ तौर पर समझता जा रहा है कि दुनिया के बड़े बड़े गुटों का एक दूसरे को एकदम खत्म कर देने का ख्याल व्यवहार्य नहीं है। पहले कभी रहा हो, तो शायद रहा हो, पर अब बिलकुल नहीं है। इसका नतीजा होगा सभी की बर्बादी इसलिये आप चाहे पसन्द करें या न करें आपको अमन के साथ, मिलजुल कर रहने की बात सोचनी ही पड़ेगी। आप चाहें तो इसे शांतिपूर्ण सहअस्तित्व भी कह सकते हैं। इसके अलावा और कोई चारा नहीं रह गया है।

[**अध्यक्ष महोदय** पीठासीन हुए]

मुझे यह देखकर बड़ी खुशी है कि अब दुनिया में कुछ ऐसी चीजें हो रही हैं, या होने जा रही हैं, जिनसे यह प्रगट होता है कि इस बात को और इस दृष्टिकोण को दुनिया के बड़े-बड़े मुल्कों द्वारा और ज्यादा स्वीकार किया जा रहा है। श्री ख्रुश्चेव अब प्रेसीडेंट आइजनहावर से मिलने जा रहे हैं और फिर प्रेसीडेंट आइजनहावर बाद में श्री ख्रुश्चेव से मिलने जायेंगे। आज से एक-दो साल पहले यह बात सोची भी नहीं जा सकती थी। इसका यह मतलब नहीं कि एक ने दूसरे की बात सही मान ली है। लेकिन यह मतलब जरूर है कि दोनों ने इस ख्याल को सही मान लिया है कि एक दूसरे से लड़कर, एक-दूसरे का खून बहाकर नहीं, बल्कि दोस्ताना तौर पर बातचीत करके ही समस्यायें हल की जा सकती हैं।

अब जब कि दुनिया में इस ख्याल को ज्यादा से ज्यादा माना जा रहा है, तब अपने मुल्क पर, अपने मुल्क की अंदरूनी हालत पर इसका लागू होना तो और भी ज्यादा अहमियत रखता है। सवाल यह नहीं है कि अपनी बात छोड़कर किसी दूसरे की बात मानली जाये। सवाल यह है कि आज की इस दुनिया में यह नजरिया गलत है, गैर-समझदारों का नजरिया है कि कुछ लोग एक-दूसरे को नेस्तनाबूद करने पर आमादा हों; हर पार्टी अपनी मुखालिफ पार्टियों का नाम निशान मिटा देने पर तुली हो। मैंने अभी श्री नम्बूद्रिपाद के जिस भाषण का जिक्र किया था, उसमें इसी का जिक्र था। आज यह नजरिया समझदारी का नहीं है। आप पसन्द करें, या न करें, आपको अब विरोधियों पर गोली चलाने, उनके सिर तोड़ने के तरीकों को छोड़ कर सामना करने, कुछ और तरीके निकालने पड़ेंगे। मैं चाहता हूं कि इस समस्या पर आप इसी नजरिये से गौर करें।

---

†मूल अंग्रेजी में

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

इतिहास में आपको इसकी मिशालें भी बहुत मिल जायेंगी। आप सभी ने जिहादों के किस्से पढ़े होंगे। एक मजहब के लोग जोर-जबर्दस्ती के बल पर सारी दुनिया को अपना मजहब मनवाना चाहते थे। उनको काफी कामयाबियां भी मिलती थीं। लेकिन बाद में,आम तौर पर धीरे-धीरे उनका जोश ठंडा पड़ जाता था। उनकी कोशिशों के बावजूद, आज दुनिया में कई मजहब मौजूद हैं। फौजों मजहबी कठ भुल्लापन, ताकत और जिहादी जोश के बल पर भी दुनिया पर एक ही कोई मजहब हावी नहीं हो पाया।

इस तरह दुनिया में इन्सान के भले के ख्याल से जब तब जागृत होने वाली ये प्रेरणायें कभी-कभी दुनिया को उलट-पुलट भी कर देती हैं, कभी-कभी दुनिया में काफी बुराइयां भी पैदा करती हैं, लेकिन बाद में धीरे-धीरे वे अपने चारों ओर के वातावरण के सांचे में ढल जाती हैं। उनका जिहादी जोश, हर चीज को उलट-पुलट कर रख देने का जज्बा धीरे-धीरे ठंडा पड़ता जाता है। वे अपने मुल्क के ढांचे में ही ढल जाती हैं। हमेशा से यही होता आया है, और आज भी हो रहा है। लोग ही उसे तंग दायरे में रखना चाहते हैं, अपने तंग नजरियों की वजह से वे चाहे कम्युनिस्ट हों, या उनके मुखालिफ लोग। ऐसे लोग ही इतिहास की इस सामान्य प्रक्रिया को उसकी अपनी चाल से आगे बढ़ने से रोकते हैं।

जहां तक हमारा ताल्लुक है, हमने अपनी ही अन्तर्राष्ट्रीय और घरेलू नीति पर चलने की कोशिश की है। हमारा अपना ही नजरिया है। लेकिन हमारी नीति अपने विरोधियों से, जो हमारे विचारों से सहमत नहीं, लड़ते रहने पर आधारित नहीं हैं। इस मुल्क की जनता के सोचने का अपना तरीका यह कभी भी नहीं रहा। इस मुल्क की जनता को उसकी विरास्त में यही ख्याल मिला है, सोचने का यही तरीका मिला है कि खुद भी जियों और दूसरों को भी जीने दो। और गलत बात के सामने सिर भी मत झुकाओ। यह ठीक है कि हमें उनका जो भी नजरिया पसन्द हो, हम उसी को अपनायें, उसी पर डटे रहें, उसी के मुताबिक बहसें करें, एक-दूसरे की बातें सुनें--समझें और समझौते करें। लेकिन आखिर में, हमें एक-दूसरे को नेस्तनाबूद करके नहीं, बल्कि खुद जीकर और दूसरों को जीने देकर ही, इसी नजरिये से उन मसलों को हल करना चाहिये।

आखिर में मैं एक बात कहना चाहता हूं, शायद श्री खाडिलकर ने इस बहस में मेरे सहयोगी वित्त मंत्री, श्री मोरारजी देसाई का और बम्बई की कुछ घटनाओं का जिक्र किया था। जो बिल्कुल असंगत था। इसके बारे में, दोनों तरफ से बहुत कुछ कहा जा सकता है, लेकिन उसका यह वक्त नहीं है। मैं समझता हूं, कि श्री खाडिलकर को इस ढंग से उन सबका जिक्र यहां नहीं करना चाहिये था। वह ठीक नहीं था।

†श्री शिवराज (चिंगलपट-रक्षित अनुसूचित जातियां) : अध्यक्ष महोदय, साम्यवादियों और गैर-साम्यवादियों द्वारा कही कई बातों को सुनने के पश्चात् किसी सही निष्कर्ष पर पहुंचना बहुत कठिन है। गणतन्त्र दल का प्रतिनिधि होने के नाते मैं सभा को यह बता देना चाहता हूं कि हम द्विदलीय प्रणाली पर आधारित संसदीय पद्धति में विश्वास करते हैं। जो लोग इस प्रणाली को नष्ट करना चाहते हैं उनका हम विरोध करते हैं क्योंकि हमारा विश्वास है कि भारत के लिये संसदीय प्रणाली ही सर्वोत्तम है। हम किसी भी विचारधारा के समक्ष घुटने नहीं टेकना चाहते। परन्तु इस संबंध में मेरा अनभव यह है कि कांग्रेस दल भी साम्यवादी दल की तरह तानाशाह है। जहां तक

†मूल अंग्रेजी में